119068 - शारीरिक कार्य विश्वास का एक स्तंभ और अनिवार्य हिस्सा है जिसके बिना विश्वास विशुद्ध नहीं होता

प्रश्न

कुछ लोगों का मानना है कि शारीरिक कार्य ईमान (विश्वास) की पूर्णता के लिए एक शर्त (आवश्यक) है, उसके मूल स्तम्भों में से नहीं है। या दूसरे शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि : शारीरिक कार्य ईमान के सही (विशुद्ध) होने के लिए शर्त नहीं है। इस मुद्दे के विषय में लोगों के बीच बहुत मतभेद पाया जाता है। अतः हम आपसे आशा करते हैं कि आप स्पष्ट करें कि य

विस्तृत उत्तर

क़ुर्आन करीम और हदीस के प्रमाणों से जिस बात का पता चलता है तथा जिस बात पर पुनीत पूर्वजों की सर्व सहमति है वह यह है कि: ईमान क़ौल और अमल (कथन एवं कर्म) का नाम है, और यह कि ईमान घटता व बढ़ता रहता है, और यह कि कर्म के बिना ईमान नहीं है, जिस प्रकार कि कथन (अर्थात ज़बान से उच्चारण) के बिना ईमान नहीं है। अतः जब तक ये दोनों चीज़ें (कथन व कर्म) एक साथ नहीं पाई जाएंगी ईमान सही (विशुद्ध) नहीं होगा। यह मुद्दा अह्लुस्सुन्नह के यहाँ सर्वज्ञात है। जहाँ तक इस कथन का संबंध है कि कर्म ईमान की पूर्णता के लिए शर्त है तो यह अशाइरा और उन्हीं जैसे अन्य लोगों का कथन है, और यह बात सर्वज्ञात है कि ईमान के अध्याय में अशाइरा का कथन (विचारधारा) मुर्जियह ही के विचारों में से एक है।

इमाम शाफेई रहिमहुल्लाह कहते हैं : "सहाबा व ताबेईन तथा उनके बाद के लोग और जिन्हें हम ने पाया है, वे सभी लोग इस बात पर सहमत हैं कि: ईमान कथन, कर्म और नीयत का नाम है और तीनों में से कोई एक दूसरे के बिना पर्याप्त नहीं है।" लालकाई की पुस्तक : "शर्ह उसूल एतिक़ादि अह्लिस्सुन्नह" (5/956) से उद्धरण समाप्त हुआ, "मज्मूउल फतावा" (7/209).

तथा आजुर्री रहिमहुल्लाह कहते हैं : "अल्लाह हम पर और आप पर दया करे, इस बात को जान लीजिए कि: मुसलमानों के उलमा (विद्वान) इस बात पर सहमत हैं कि सभी लोगों पर ईमान लाना अनिवार्य है, और वह हृदय से पुष्टि करने, ज़बान से स्वीकार (इक़रार) करने और शरीर के अंगों द्वारा अमल (कार्य) करने का नाम है।

फिर यह भी जान लीजिए कि केवल हृदय का ज्ञान और उसकी पुष्टि काफी नहीं है बल्कि इसके साथ ज़बान से इक़रार करना भी ज़रूरी है, तथा हृदय का ज्ञान और ज़बान से इक़रार करना काफी नहीं है जब तक कि शरीर के अंगों द्वारा अमल न हो। अतः जब किसी के अन्दर ये तीनों चीज़ें एकत्रित हो जाएँ तो वह मोमिन होगा। इस बात का प्रमाण क़ुर्आन, हदीस और मुसलमानों के उलमा (विद्वानों) का कथन हैं।" "अश्शरीआ (2/611)'' से समाप्त हुआ।

शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमिय्यह रहिमहुल्लाह कहते हैं : "इस मस्अला के दो पहलू हैं : और दोनों में से एक स्पष्ट कुफ्र को सिद्ध करने के बारे में है, और दूसरा प्रोक्ष कुफ्र को सिद्ध करने के बारे में है।

रही बात दूसरे पहलू की तो वह इस मुद्दे पर आधारित है कि ईमान कथन और कर्म का नाम है जैसा कि पहले बयान हुआ। और यह बात असंभव है कि कोई व्यक्ति अपने हृदय में दृढ़ विश्वास रखने वाला हो कि अल्लाह ने उस पर नमाज़, ज़कात रोज़ा और हज्ज को अनिवार्य किया है, परन्तु वह जीवन भर इस प्रकार जीवित रहे कि अल्लाह के लिए एक सज्दा न करे, न रमज़ान का रोज़ा रखे, न अल्लाह के लिए ज़कात दे, और न ही अल्लाह के घर का हज्ज करे। तो यह असंभव है और ऐसा हृदय में निफाक़ (पाखंड) और विधर्म के साथ ही पाया जा सकता है, वह व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता है जिसके दिल में सही ईमान पाया जाता है।" "मजमूउल फतावा" (7/616) से समाप्त हुआ।

इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब रहिमहुल्लाह कहते हैं : "इस बात में उम्मत के बीच कोई मतभेद नहीं है कि तौहीद (एकेश्वरवाद) का हृदय से होना ज़रूरी है, जिसका मतलब ज्ञान है, तथा ज़बान से होना ज़रूरी है जिसका मतलब कथन है, तथा कर्म से होना ज़रूरी है जो कि आदेशों और निषेधों के निष्पादन और क्रियान्वयन का नाम है। यदि उसने इनमें से किसी भी चीज़ का उल्लंघन किया, तो वह व्यक्ति मुसलमान नहीं है।

यदि वह अल्लाह के एकीकरण को स्वीकार करे, परन्तु उसके अनुसार वह कार्य न करे तो वह फ़िरऔन और इब्लीस की तरह एक हठी काफिर (नास्तिक) है। अगर वह प्रत्यक्ष में तौहीद के अनुसार कार्य करे, परन्तु प्रोक्ष में उसमें विश्वास न रखता हो तो वह एक शुद्ध मुनाफिक़ (पाखंडी) है, जो काफिर (नास्तिक) से भी अधिक दुष्ट है। और अल्लाह तआला ही सबसे अधिक ज्ञान रखता है।" "अद-दुरर् अस्सनिय्यह फिल अज्विबतिन् नजदिय्यह" (2/124) से समाप्त हुआ।

वह यह भी कहते हैं : "आप इस बात को जान लीजिए - अल्लाह आप पर दया करे - कि अल्लाह का दीन (धर्म) दिल में विश्वास के द्वारा, प्रेम के द्वारा और द्वेष के द्वारा प्रकट होता है, तथा ज़बान से उच्चारण के द्वारा और कुफ्र (अविश्वास) के उच्चारण को त्यागने के द्वारा विदित होता है, इसी प्रकार शारीरिक अंगों से इस्लाम के स्तंभों के क्रियान्वयन और नास्तिकता की ओर ले जाने वाले कार्यों के त्याग द्वारा प्रदर्शित होता है। यदि इन तीनों में से कोई एक छूट जाए तो वह कुफ्र (अविश्वास) और धर्मत्याग में जा पड़ता है।" "अद-दुरर् अस्सिनय्यह" (10/87) से समाप्त हुआ।

इस विषय से संबंधित अह्ले सुन्नत की बातें बहुत ज़्यादा हैं। उन्हीं में से स्थायी समिति का वह फत्वा भी है जिसमें कुछ ऐसी पुस्तकों से सावधान किया गया है जिनमें इस दृष्टिकोण को अपनाया गया है कि शारीरिक कार्य विश्वास के लिए पूर्णता की एक शर्त है, और स्थायी समिति ने स्पष्ट किया है कि यह मुर्जियह का मत है। देखिएः "फतावा स्थायी समिति" (2/127-139) द्वितीय संग्रह।

अतः अह्ले सुन्नत के निकट शारीरिक कार्य ईमान का एक रुक्न (स्तंभ) और हिस्सा है, जिसके बिना ईमान विशुद्ध नहीं होता, और शारीरिक कार्य के समाप्त हो जाने का मतलब हृदय के कार्य का समाप्त हो जाना है; क्योंकि वे दोनों परस्पर एक दूसरे के लिए अनिवार्य हैं। और जो कोई यह सोचे कि शारीरिक कार्य के बिना दिल में शुद्ध विश्वास क़ायम रहता है, जबकि उसे उसका ज्ञान है और कार्य करने में वह सक्षम है, तो उसने एक असंभव चीज़ की कल्पना की है, और प्रत्यक्ष और प्रोक्ष के बीच सहगमन का इन्कार किया है, और मुर्जियह के निंदित विचार का पालन किया है।

और अल्लाह तआला ही सबसे अधिक ज्ञान रखता है।